गायन के अभ्यास एवं प्रस्तुतिकरण में ताल पक्ष का स्थान

सतीश गोथरवाल
शोधार्थी, 290, गायत्री संगीत कला केंद्र, आज़ाद पुरा, बिरलाग्राम, नागदा जं. जिला उज्जैन, मध्यप्रदेश

सार

गायन के अभ्यास एवं प्रस्तुतीकरण में ताल पक्ष का महत्वपूर्ण स्थान हैं। निश्चित मात्राओं की गणना के आधार पर ताल का निर्माण होता हैं। ताल में मात्रा, ताली, खाली और विभाग के अनुसार उसका वज़न तथा सम का निर्धारण होता हैं, जिसके द्वारा गायक अपने गायन में सम को दिखता हैं। ताल गायन का प्राण हैं, जिसके बिना गायन की पूर्णता संभव नहीं है। गायन के अभ्यास एवं प्रस्तुतीकरण में ताल वाहन के समान होता हैं, जिसकी सहायता से गायक लय, लयकारी और विभिन्न वज़न(जरब) का प्रयोग करके अपने गायन को पुर्णता की और ले जाता हैं, जिस प्रकार दीपक में बाती का, फूल में सुगंध का, स्त्री की मांग में सिंदुर का महत्व हैं, शरीर में प्राण का, ठीक उसी तरह संगीत की प्रत्येक विधा में ताल महत्वपूर्ण हैं। अतः हम कह सकते हैं कि गायन के अभ्यास एवं प्रस्तुतीकरण में ताल पक्ष का महत्वपूर्ण स्थान हैं इसके बिना गायन पूर्ण नहीं हो सकता हैं।

प्रस्तावना

भारतीय संगीत गायन, वादन एवं नृत्य तीनों विधाओं का संयोग है और इन्हीं से संगीत जैसा पवित्र शब्द पूर्ण रूप से सार्थक हैं। ललित कलाओं में संगीत कला सर्वश्रेष्ठ मानी जाती हैं। संगीत के दो मुख्य उपादान हैं– स्वर एवं लय। इन्हीं उपादानों के माध्यम से संगीतज्ञ संगीत का सृजन करता है किन्तु संगीत कला में लय का स्थान अत्यंत ही महत्वपूर्ण हैं। लय के बिना स्वर की उत्पत्ति असंभव है। संगीत में लय और ताल का प्रयोग प्राचीन काल से हो रहा है। ताल के बिना भी संगीत अधुरा है। संगीत में ताल की महत्ता का वर्णन अनेक लोगों ने किया हैं। भरत मुनि के अनुसार–''यस्तु तालं न जानाति न स गाता न वादकः।

तस्मात सर्वप्रयत्नेन कार्य तालावधारणम।।''[1]

उपरोक्तानुसार जो ताल को नहीं जानता है वह ना तो गायक और ना ही वादक हो सकता हैं। संगीत में ही गायन, वादन और नृत्य समाये हुए है। अतः गायन, वादन और नृत्य कि पुर्णता बिना ताल के संभव नहीं हो सकती हैं। निश्चित ताल गति के परिणामस्वरूप संगीत के क्रमिक आरोह, अवरोह और विराम आदि अत्यंत प्रभावशाली हो जाते हैं। वास्तव में संगीत की प्रत्येक विधा गायन, वादन एवं नृत्य में लय एवं ताल का प्रयोग अत्यंत ही महत्वपूर्ण हैं। जैसे किसी पक्षी का उड़ना उसके पंखों पर निर्भर करता हैं उसी तरह संगीत में गायन, वादन, नृत्य तीनों विधाओं की क्रिया ताल पर ही निर्भर हैं। गायन का वाहन ताल होता है जिस पर आरूढ़ होकर गायक अपने गायन को प्रभावशाली बनाता चला जाता है।

गायन के अभ्यास एवं प्रस्तुतिकरण में ताल पक्ष का स्थान

भारतीय संगीत गायन, वादन एवं नृत्य तीनों विधाओं का संयोग है और इन्हीं संगीत जैसा पवित्र शब्द पूर्ण रूप से सार्थक हैं। गीतं वाद्यम तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्चयते।[2] ललित कलाओं में संगीत का स्थान श्रेष्ठ है क्योंकि संगीत में प्रेषणीयता होती है। संगीत में भी स्वर लय एवं ताल की आवश्यकता होती है। संगी के दो मुख्य अंग हैं– स्वर एवं लय। स्वर का प्रयोग गायन(रागों) में होता है। गायन की

1.श्री बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, संपादक तथा व्याख्याकारः नाट्यशास्त्र पृ. 211
2.शारंगदेव– संगीत रत्नाकर, पृ. 6

क्रिया या स्वर सौन्दर्य जिस पर निर्भर करता है वह उसका पिच व समय है। कहा जाता है कि ''म्यूजिक इज द साइंस ऑफ ट्यून एंड टाइम।'' गायन के मुख्य दो विभाग है– निबद्ध और अनिबद्ध गायन। निबद्ध गायन में स्वर पर कितना रुकना है? किस प्रकार की लय रखना है? आदि बातों का विशेष ध्यान रखा जाता है। स्वरों को मात्राओं में बांधना, लय और उन्हें आवर्तन में निर्धारित करना ताल कहलाता है। कोई भी सिर्फ एक आलापतान करना संगीत नहीं होता, बल्कि उसे ताल के अनुशासन में दिखाना पूर्ण संगीत होगा। इसके बिना वह अधुरा सा लगेगा। लय का प्रयोग विशेष रूप से तालों में किया जाता है। लय शाश्वत है। लय का तात्पर्य गति से है। लय की प्रमुख विशेषता नियमितता है। मनुष्य के शरीर में साँसों का आना–जाना, हृदय का धड़कना सूर्य का उदय–अस्त होना और नाड़ी का स्पंदन आदि सभी की गति नियमित है। स्वरों की उत्पत्ति लय के बिना असंभव है। संगीत में गायन, वादन और नृत्य में जो समय लगता है उसकी गति लय है। इसी लय को मापने के लिए ताल की उत्पत्ति हुई। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में लय की व्याख्या निम्न शब्दों में की है–

''त्रयो लयाश्च विज्ञेया द्रुतमध्यविलंम्बिताः।
छन्दोक्षरपादानां हि समत्वं यत प्रातिर्तम।
कलाकालान्तर कृतः लयो मानसंगज्ञितः''।[1]

लय जो सृष्टि का आधार है। इस संसार में सारे गृह नक्षत्र सभी एक लय के अधीन होकर कार्य करते हैं। इस लय में लेशमात्र भी त्रुटि होने पर अनिष्ट और विनाश की आशंका रहती है। सूर्य का उगना और डूबना, चंद्रमा और तारों का दिखना, हमारे सारे त्यौहारों, रीति–रिवाजों, दिनचर्या, सभी लय के अंतर्गत आते हैं। एक और लय बहुत स्थूल है तो दुसरी और सूक्ष्म हैं। समय की गणना सेकेण्ड, मिनट, घण्टे, दिन आदि के माध्यम से होती है, लेकिन संगीत में हम इसे मात्राओं के माध्यम से बयां करते हैं।

समय की समान गति को लय कहते हैं। वह गति जो बहुत शीघ्रता से परिवर्तित हो, उसे मापना कठिन होगा, जिसे माप सके वही संगीतज्ञों के लिए उपयोगी होगी। लय की कसौटी है उसकी बारंबारता। लय से लयकारियों का सृजन होता हैं, जिसे हम एक मात्रा में जितनी क्रियायें करें इसे लयकारी कहते हैं। एक में एक बराबर की लय, एक में डेढ़, डेढ़गुन और इसी तरह एक में दो, दुगुन की लय आदि। ये सब लयकारी के रूप हैं। जब हम लय का रेखाचित्र बनाते हैं तो एक तटस्थ बिन्दु हैं एक में एक के ऊपर की तरफ चलेंगे तो लय बढ़ेगी और नीचे की तरफ चलेंगे तो लय घटेगी। घटती हुई लय को विलंबित और बढ़ती हुई लय को द्रुत की श्रेणी में रखा जाता हैं। मुख्यतः लय तीन प्रकार की होती हैं–

1. विलंबित लय

2. मध्य लय

3. द्रुत लय

लयकारी को विद्वानों ने इस प्रकार वर्गीकृत किया हैः–

1. आड़ लय

मोटे तौर पर हम किसी भी वक्र या आड़ी तिरछी लय को आड़ कह सकते हैं लेकिन आड़ का अर्थ हैं एक मात्रा में डेढ़ मात्रा कहना, जिसे हम दो में तीन अर्थात 3/2 = 1s2 s3s लिखकर कहते हैं। इस

1.जमुना प्रसाद पटेल– ताल वाद्य परिचय पृ. 213

लयकारी के बारे में यही एक विचारधारा हैं। इस लयकारी को जब हम पलट देते हैं अर्थात तीन मात्रा में दो मात्रा 2/3 = 1ss2ss लिखकर कहते हैं।

2. कुआड़ लय

इस लयकारी के बारे में दो विचार धारायें हैं। पहली विचार धारा के अनुसार एक में सवा, दो में ढाई, चार में पाँच को कुआड़ लय कहते हैं–

''चार में पाँच अर्थात 5/4=1sss2sss3sss4sss5sss लिखकर कहते हैं''।[1]

दूसरी विचार धारा के अनुसार सवा दो गुन, चार में नौ मात्रा कहने या लिखने को कुआड़ की लयकारी कहते हैं। आम तौर पर पहली विचार धारा अधिक मान्य हैं।

3. बियाड़ लय

इसके बारे में भी दो विचार धारायें हैं। पहली विचार धारा के अनुसार पोने दो गुन अर्थात चार मात्रा में सात मात्रा कहने या लिखने को बिआड़ लय कहते हैं –

''चार में सात = 7/4=1sss2sss3sss4sss5sss6sss7sss लिखकर कहते हैं''।[2]

दूसरे मत के अनुसार कुआड़ की आड़ को बियाड़ की लयकारी कहते हैं अर्थात 9/4 × 3/2= 27/8इसे बिआड़ की लयकारी कहते हैं! ये अत्यंत क्लिष्ट है इसलिए इस विचारधारा को मानने वाले लोग बहुत कम हैं।

ताल

निश्चित मात्राओं के बोल समूह कि रचना जिसमें ताली, खाली और निश्चित विभाग हो तो ताल कहते हैं। ताल की उत्पत्ति का उल्लेख वेदों, ग्रंथों और पुराणों में मिलता हैं। काल की गति सदैव अग्रगामी होती है। संगीत में लय एवं ताल का प्रयोग अत्यंत प्राचीन काल से चला आ रहा हैं। गीत की आत्मा तो लय है और उसके सृजन के लिए ताल उसका नियम। इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है, ताल और लय एक दूसरे के पूरक हैं और दोनों ही अविभाज्य हैं। लय यदि धड़कन है तो ताल हृदय और हृदय में ही जीवन हैं। इसलिए ताल संगीत का प्राण हैं, जिस तरह प्राण निकल जाने पर शरीर मृत हो जाता है। उसी तरह ताल विहीन संगीत निर्जीव एवं नीरस हो जाता है। ताल का मुख्य उद्देश्य रंजकता देना है। ताल के बिना संगीत की कल्पना करना असंभव है। डॉ. अरुण कुमार सेन के अनुसार ''निश्चित ताल गति के फलस्वरूप ही संगीत का क्रमिक आरोह, अवरोह, विराम आदि अत्यंत प्रभावोत्पादक हो जाते हैं।''[3]

संगीत (गायन) का अस्तित्व लय एवं ताल पर ही टिका होता हैं। ताल के बिना गायन अधूरा है। जैसे किसी पक्षी का उड़ना उसके पंखों पर निर्भर करता हैं उसी तरह संगीत में गायन, वादन, नृत्य तीनों विधाओं की क्रिया ताल पर ही निर्भर हैं।

1.पं. गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव– ताल परिचय भाग – 2 पृ. 62
2.पं. गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव– ताल परिचय भाग – 2 पृ. 63
3.डॉ. अरुण कुमार सेन– भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृ. 49–50

गायन का अभ्यास करते समय ताल का अहम स्थान है। ऐसा कहा जाता है कि जिस प्रकार शरीर में प्राण आवश्यक है, उसी प्रकार गायन में ताल आवश्यक हे। विद्वानों के अनुसार कहा जाता है कि बेसुरा एक बार चल सकता है, किन्तु बेताला कदापि नहीं चल सकेगा। ताल के बिना संगीत पूर्ण रूप से निष्प्राण या निर्जीव हो जाएगा।

अतः गायन का अभ्यास करते समय ताल का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जब गायक अपना गायन अभ्यास करता है तो वह किसी न किसी ताल में रहता है, उसे अपने द्वारा किसी भी माध्यम से ताली लगाकर अभ्यास करना चाहिए। ताली के साथ–साथ संभव हो तो तबला संगत भी होती रहे, जिससे ताल का स्वरूप स्पष्ट दिखाई पड़े।

जब गायक अपना गायन आरंभ करता है तो वह आलाप, स्वर विस्तार आदि करके बंदिश कि और आता है। तब ताल पक्ष का महत्व उसके सम को प्रकट करने से ही स्पष्ट हो जाता है, किसी भी ताल में बंदिश का सम दिखने से ही गायकों, वादकों एवं श्रोताओं कि मापन क्रिया प्रारंभ होती है, जिससे गायन को समझा जा सके व उसका शास्त्रीय रूप से आनंद लिया जा सके। तालों से गायन में विभिन्न रसों का निष्पादन होता हैं। ''दादरा, कहरवा आदि तालों से श्रृंगार रस की उत्पत्ति होती हैं। एक ताल व झूमरा से शांत रस की निष्पत्ति होती है।''[1] संगीत में ताल की महत्ता का वर्णन अनेक लोगों ने किया हैं। भारत मुनि के अनुसार–

''यस्तु तालं न जानाति न स गाता न वादकः।
तस्मात सर्वप्रयत्नेन कार्य तालावधारणम।।''[2]

अंत में हम यह कह सकते हैं कि गायन में लय और ताल का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान हैं। ये दोनों उपादान गायन के प्राण हैं। जैसे दीपक में बाती का, फूल में सुगंध का, स्त्री की मांग में सिंदुर का महत्व हैं। ठीक उसी तरह संगीत की प्रत्येक विधा में ताल महत्वपूर्ण हैं।

1.बसंत–संगीत विशारद, पृ. 556
2.श्री बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, संपादक तथा व्याख्याकार– नाट्यशास्त्र, पृ. 211